ISSN- 2454-2695
Volume 03 Issue 0
January 2017

साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

मैं बहती रही हूँ, बहती रहुंगी

सुधीर कुमार
शोध-छात्र, ललित-कला विभाग (Fine Arts)
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, भारत
Email: sudhirkoomar@gmail.com

तुम मेरे पुत्र हो
मैं तुम्हारी प्यास से अवगत हूँ
मैं बहती रही हूँ, बहती रहुंगी।

जब तुम न थे इस पृथ्वी पर
तब भी मैं बहती थी
तुम्हारी ही तरह अन्य जीव
मेरी गोद में आकर अपनी प्यास मिटाते थे।
मेरी कल-कल ध्वनि उन्हें आह्लादित करती थीं,
वृक्ष और लताऐं मेरे आस-पास नृत्य करते थे
पवन संगीत उत्पन्न करते थे,
और बादल भी घिर-घिर मृदंग बजाते थे।
मानो संपूर्ण प्रकृति कोई उत्सव मना रही हो
शायद तुम्हारे आगमन की खुशी में !

जब तुम आए, मैंने अपने आँचल फैला दिए थे।
तुम औरों से बुद्धिमान लगे,
बहुत मेहनती भी,
तुमने सबकुछ शीघ्र ही सीख लिया !
मेरे जल को तुमने अमृत कहा था,
जीवनदायिनी मानने लगे ।
तुमने जैसे चाहा मेरी धाराओं को मोड़ा,
मेरे आँचल को सींच लहलहा दिया!

ISSN- 2454-2695
Volume 03 Issue 0
January 2017

साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

अपने पुत्रों के इस प्रेम से मैं आनंदित थी,
और एक युवती से बदल माँ का सुख महसूस करने लगी थी।
मेरे दोनों ओर तुम्हारे भव्य नगरों को देख मैं इतराने लगी थी।
मेरे पुत्रों की कड़ी मेहनत मुझे अटूट साहस देते
मैंने भी अपनी छाती खोल दी,
जो सब था, अपने पुत्रों के लिये उड़ेल दी।
अब तुम छोटी-छोटी नौकाओं से नहीं
बड़े-बड़े पोतों से मुझे पार करते थे।

तुममें से कुछ और भी जिज्ञासु थे
वे मेरी जन्म की कहानी ढुँढने निकले।
मैं कहाँ से आई, उस उद्‌गम की खोज में निकले।
तुममें से कुछ ने तो मुझे अपने ही अंदर प्रवाहित होते देखा
अन्य तत्त्वों की तरह।
अत: जीवन-पश्चात् पुनर्समाहित होने का विधान बताया।
मेरी महिमा और बढ़ गई,
जीवनदायिनी से बढ़कर मैं 'माँ' बन गई।
अपने पुत्रों के मुख से 'माँ' सुनकर कैसे न खुश होती
मैंने अपने प्रेम से तुम्हारे धन-धान्य भर दिए।
अब मानव-पुत्र ही नही, उसकी सभ्यताएं मेरी भुजाओं में बल देती थीं,
और समुद्र से मिल अपने पुत्रों की यह सफल कहानी
बारंबार मैं कहती थी।

पर सहसा तुम्हें यह क्या हो गया ?
अपनी सफलता का क्या तुम्हे अहंकार हो गया ?
अपने नगरों को बढ़ाने की होड़ में
क्यों तुमने मेरे अन्य पुत्रों के घर छीन लिए ?
वे तुम्हारी तरह बुद्‌धिमान नहीं,
तकनीकों में पारंगत नहीं,
क्यों उनके प्राकृतिक आवास छीन लिए ?
वे तुमसे क्या माँगते थे कि उनके माँ का साथ उनसे छीन लिए ?
आवास-विहीन वे भोजन की खोज में तुम्हारी गलियों में विचरेंगे।
कभी तुम उनको अपनी भीमकाय वाहनों तले,
तो कभी वे अपनी कदमों तले तुम्हारी खेतों को रौंदेंगे।
अपने ही पुत्रों को आपस मे झगड़ते देख कष्ट होता है!

ISSN- 2454-2695
Volume 03 Issue 0
January 2017

साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

अब तुम्हारी बुद्धिमानी कहाँ गई ?
जो कल तुम्हारी माँ थी आज कचड़े का नाला हो गई ?
जो कल निर्मल कल-कल जीवनदायिनी थी आज हालाहल हो गई ?
अमृत का प्याला रहुँ, या विष रूपी हाला,
तुम मेरे पुत्र हो
मैं तुम्हारी प्यास से अवगत हूँ
मैं बहती रही हूँ, बहती रहुंगी।

पर मुझे डर है,
मेरा विषाक्त यह जल
तुम्हारी सभ्यताओं को जला न दे।
तुम्हारी भावी संतानों के लिए अभिशाप न बन जाए।
तुम क्यों नहीं समझते -
तुम्हारे विषैले यह कल-कारखाने मेरे आँचल को झुलसाने लगे हैं।
तुम्हारे वाहनों से निकली आग की लपटें बादलों की मृदंगों को दहलाने लगे हैं।
अब कोई उत्सव का दृश्य नहीं है
ना ही कोई संगीत
विशालकाय मशीनों का कोलाहल है,
और वाहनों की कर्कश बीप।
मानो विनाश के आगमन में तांडव हो रहा हो।
वृक्ष और लताओं के नृत्य नहीं,
पीड़ितों के चीख-चित्कार का भयावह क्रंदन हो रहा हो।

थक चुकी हूँ,
तुम्हारे प्लास्टिक और विषैले रसायनों का बोझ ढोते-ढोते।
कोशिश करती हूँ,
घुला कर छुपा लूँ अपने घूँटों में
तुम्हारे इन विष के रेलों को समुन्दर तक पहूँचने से पहले।
ताकि
जब वह मुझसे पुछे मेरे पुत्रों का हाल
मैं कह सकूँ -
मेरी निर्मलता मे उनका समाचार वह ले ले।

*****